अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

रमणिका गुप्ता के साहित्य में दलित चेतना : विचार, संघर्ष और सामाजिक सरोकार

प्रिंस गुप्ता, पी.एच.डी. शोधार्थी
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
ई.मेल - prince.gupta.rewa.mp@gmail.com

सारांश -

हिंदी साहित्य में दलित विमर्श सामाजिक यथार्थ को समझने और सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए एक महत्वपूर्ण वैचारिक धारा के रूप में उभरा है। इस विमर्श ने उन वर्गों के अनुभवों, संघर्षों और पीड़ा को अभिव्यक्ति दी है, जिन्हें लंबे समय तक मुख्यधारा के साहित्य में पर्याप्त स्थान नहीं मिला। रमणिका गुप्ता का साहित्य इसी वैचारिक परंपरा का सशक्त प्रतिनिधि है। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से दलित, आदिवासी, मजदूर और स्त्री जीवन की वास्तविकताओं को उजागर किया है तथा सामाजिक अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध की चेतना को स्वर दिया है। उनकी कहानियों, उपन्यासों, कविताओं और आत्मकथा में दलित समाज की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। उनकी आत्मकथा "हादसे" व्यक्तिगत अनुभवों के साथ-साथ सामाजिक संघर्षों का दस्तावेज़ बन जाती है। रमणिका गुप्ता ने अपने साहित्य के साथ-साथ सामाजिक आंदोलनों और पत्रिका के माध्यम से भी दलित और हाशिए के समाज की आवाज़ को मंच प्रदान किया। उनके लेखन में दलित अस्मिता, स्त्री-स्वतंत्रता, श्रम की गरिमा और सामाजिक समानता की आकांक्षा स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इस प्रकार उनका साहित्य दलित चेतना को केवल पीड़ा की अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रखता, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और मानवीय गरिमा की स्थापना की दिशा में सक्रिय हस्तक्षेप करता है।

बीज शब्द - दलित चेतना, सामाजिक न्याय, दलित विमर्श, स्त्री चेतना, दलित संघर्ष, अस्मिता, सामाजिक परिवर्तन, हाशिए का समाज, प्रतिरोध।

शोध पत्र -

रमणिका गुप्ता लिखती हैं - *"दलित साहित्य की परिभाषा और सीमा उतनी ही है जितनी मनुष्यता की सीमाएँ। इस दृष्टि से दलित साहित्य आज की सोच का प्रतिनिधित्व करता है।"* 1 दलित साहित्य पारंपरिक साहित्यिक आदर्शों से अलग उस यथार्थ को सामने लाता है, जिसमें जाति के कारण मनुष्य को जीवन भर अपमान सहना पड़ता है। यह केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति भर नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा की स्थापना के लिए चल रहे व्यापक आंदोलन का सांस्कृतिक रूप भी है। दलित चेतना इस साहित्य का प्राणतत्त्व है, क्योंकि दलित साहित्य मूलतः मुक्ति

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

और आत्मसम्मान की आकांक्षा से जन्मा साहित्य है। इसमें शोषण, उत्पीड़न और सामाजिक बहिष्कार के विरुद्ध प्रतिरोध की स्पष्ट आवाज़ सुनाई देती है। रमणिका गुप्ता का साहित्य इसी सामाजिक यथार्थ को उजागर करता है। उनकी रचनाएँ झारखंड क्षेत्र के आदिवासी और दलित जीवन, विशेषतः स्त्रियों के संघर्ष, पीड़ा और प्रतिरोध को मार्मिक रूप से प्रस्तुत करती हैं। वे शोषित वर्गों में चेतना और आत्मसम्मान की भावना जगाने का कार्य करती हैं। उनके साहित्य (विशेषतः कथा साहित्य) में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक स्तरों पर दलितों की समस्याओं का चित्रण मिलता है जिससे यह स्पष्ट होता है कि दलित साहित्य परम्परागत सामाजिक संरचनाओं का विरोध करते हुए परिवर्तन और समानता की दिशा में संघर्ष का साहित्य है। अभय कुमार दुबे का कथन है कि *"कला और मुक्ति कामना का सर्वाधिक सम्पूर्ण, सतत और निर्बाध समागम केवल दलित साहित्य में ही मिलता है। दलित साहित्य में यह विलक्षणता इसलिए है क्योंकि उसके रचयिता को मुक्ति की किसी भी अन्य भारतीय के मुकाबले अधिक जरूरत है।"* 2

भारतीय समाज में जातिवाद की जड़ें अत्यन्त गहरी हैं, जिसका वास्तविक अनुभव वही व्यक्ति कर सकता है जो इसका प्रत्यक्ष भोगी है। सदियों पुरानी इस व्यवस्था ने मानवता की भावना को कमजोर कर समाज के एक बड़े वर्ग को अपमान और अभावपूर्ण जीवन जीने के लिए विवश किया है। सतही रूप से समानता की बातें अवश्य की जाती हैं, परन्तु व्यवहार में जातिगत भेदभाव आज भी विद्यमान है। संविधान द्वारा समानता और न्याय की व्यवस्था स्थापित होने के बावजूद भी ग्रामीण समाज में कई बार ऊँची जातियों की सामाजिक सत्ता ही प्रभावी रहती है। दलितों के साथ होने वाले अत्याचार, सामाजिक बहिष्कार और संस्थागत भेदभाव इसकी निरंतरता को प्रमाणित करते हैं। दलित चेतना मूलतः अस्मिता और पहचान के प्रश्न से जुड़ी हुई है। अपनी पहचान स्थापित करने और सम्मानजनक अस्तित्व के लिए दलित समाज ने संघर्ष प्रारम्भ किया, जो आगे चलकर सामाजिक आन्दोलन और फिर दलित साहित्य आन्दोलन के रूप में विकसित हुआ।

दलित साहित्य का उद्देश्य केवल पीड़ा का चित्रण करना नहीं है, बल्कि एक वैकल्पिक सामाजिक दृष्टि प्रस्तुत करना भी है। यह साहित्य उस व्यवस्था को चुनौती देता है जिसने मनुष्य को जाति के आधार पर विभाजित कर दिया। इस संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि का कथन महत्त्वपूर्ण है कि *"दलित साहित्य का उद्देश्य एक वैकल्पिक संस्कृति और समाज में दलितों की एक अलग पहचान सृजित करना है। दलित लेखक किसी समूह, मसलन किसी जाति विशेष, सम्प्रदाय के खिलाफ नहीं है। लेकिन व्यवस्था के विरुद्ध है। चाहे वह सरकारी, सामाजिक संस्था की व्यवस्था हो।"* 3 डॉ. नामवर सिंह ने भी दलित साहित्य को एक नए ढंग का साहित्य माना है, क्योंकि यह समाज से सीधे प्रश्न करता है और उस व्यवस्था को कटघरे में खड़ा करता है जिसने एक बड़े वर्ग को वंचना और अपमान का जीवन

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

जीने के लिए विवश किया। वास्तव में, दलित साहित्य मानवता की पुनर्स्थापना का साहित्य है, जिसका लक्ष्य सामाजिक न्याय और समानता की स्थापना है। इसी वैचारिक धरातल पर रमणिका गुप्ता का साहित्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे जन्म से दलित न होते हुए भी दलित और हाशिए के समाज के पक्ष में निरंतर लेखन कार्य करती रही हैं। उनकी पुस्तक "दलित चेतना : साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार" दलित साहित्य की वैचारिकी को समझने में अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इसमें उन्होंने दलित साहित्य के स्वरूप, उसके सामाजिक संदर्भों और समकालीन चुनौतियों पर गंभीर विचार किया है।

रमणिका गुप्ता केवल लेखन तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि सामाजिक आंदोलनों में भी भरपूर सक्रिय रहीं। मजदूर आंदोलनों, स्त्री अधिकारों और दलित प्रश्नों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता उनके साहित्य में स्पष्ट दिखाई देती है। उन्होंने अपनी पत्रिका "युद्धरत आम आदमी" के माध्यम से दलित, आदिवासी और स्त्री से सम्बद्ध साहित्य को मंच प्रदान किया। इस पत्रिका ने अनेक नए दलित लेखकों को सामने लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने रमणिका गुप्ता के संपादकीय लेखों को संकलित करते हुए लिखा है कि *"हिंदी दलित साहित्य परिदृश्य को समझने के लिए इसकी पृष्ठभूमि को जानना जरूरी है। हिंदी दलित साहित्य अनेक उतार-चढ़ाव से गुजरा है। उन तमाम स्थितियों के साथ ही दलित साहित्य की सीमाओं, चुनौतियों, दशा और दिशा का मूल्यांकन हो पाएगा। अतीत की कंटीली और दुरूह यात्रा की पड़ताल वर्तमान सन्दर्भों के आधार पर की जा सकती है।"* 4

रमणिका गुप्ता का मानना है कि सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए सामाजिक पहचान, सम्मान और बराबरी अनिवार्य हैं। उनके अनुसार यह संघर्ष केवल किसी एक वर्ग के लिए नहीं, बल्कि पूरे समाज के मानवीय भविष्य के लिए आवश्यक है। इसलिए वे दलित लेखकों और आंदोलनों में एकता की आवश्यकता पर भी बल देती हैं। उनका स्पष्ट मत है कि जाति-व्यवस्था ने पहले ही समाज को विभाजित कर रखा है, इसलिए दलित समाज को आपसी मतभेदों में बिखरने के बजाय सामूहिक नेतृत्व विकसित करना चाहिए। रमणिका गुप्ता की कहानियाँ भी इसी सामाजिक यथार्थ को उजागर करती हैं। उनकी कहानियों में दलित समाज की पीड़ा, संघर्ष और प्रतिरोध का सशक्त चित्रण मिलता है। उदाहरण के लिए "खुश रहो" और "बहू-जुठाई" जैसी कहानियों में उन्होंने सामंती समाज की अमानवीय मानसिकता और दलितों के प्रति होने वाले अत्याचारों को मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया है। "बहू-जुठाई" कहानी में वर्णित प्रथा के माध्यम से यह दिखाया गया है कि किस प्रकार सामंती शक्तियाँ दलित स्त्रियों के सम्मान तक को रौंद देती थीं। "ललिता" कहानी में लेखिका ने यह भी दिखाया है कि कभी-कभी दलित समाज स्वयं भी मुख्यधारा के मनुवादी मूल्यों से प्रभावित होकर उन्हीं सामाजिक विकृतियों को अपनाने लगता है, जिनके विरुद्ध उसकी ऐतिहासिक लड़ाई रही है। इस प्रकार रमणिका गुप्ता का साहित्य केवल बाहरी शोषण को ही नहीं, बल्कि समाज के भीतर मौजूद अंतर्विरोधों को भी उजागर करता है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

समाज में जाति-व्यवस्था और जनकल्याण से जुड़ी नीतियाँ ही राजनीति का आधार बनती हैं। राजनीति का उद्देश्य जनता का संरक्षण, सामाजिक व्यवस्था बनाए रखना तथा भ्रष्टाचार और अन्याय पर नियंत्रण स्थापित करना है। जीवन का लगभग हर क्षेत्र राजनीति से प्रभावित होता है। रमणिका गुप्ता के उपन्यास "मौसी" में कोलियरी क्षेत्र के राजनीतिक वातावरण और मजदूर संघर्ष का यथार्थ चित्रण मिलता है। इसमें भगवान बाबू जैसे नेता दलित मजदूरों के अधिकारों के लिए आंदोलन करते दिखाई देते हैं। इन आंदोलनों के माध्यम से कोलियरी क्षेत्रों में यूनियन संगठित हुई और गरीब मजदूरों में अपने अधिकारों के प्रति चेतना विकसित हुई। रमणिका गुप्ता लिखती हैं कि *"जिस जद्दोजहद से हम गुजरे उसे आज भी याद करके मैं सिहर उठती हूं लेकिन इस विश्वास से रोमांचित हो उठती हूं कि मजदूरों की संगठन शक्ति कामयाब हुई। बस इच्छा शक्ति का होना जरूरी होता है ऐसे समय में।"* 5

रमणिका गुप्ता की आत्मकथा "हादसे" एक ऐसी संघर्षगाथा है, जिसमें उनके सामाजिक और राजनीतिक जीवन के कई अनुभव दर्ज हैं। यह केवल व्यक्तिगत कथा नहीं, बल्कि दलित मजदूरों, स्त्रियों और शोषित वर्गों के सामूहिक संघर्ष का दस्तावेज़ बन जाती है। इसमें कोयला खदानों के आंदोलन, सामंती शक्तियों से टकराव, मजदूर संगठनों की भूमिका तथा राजनीति में व्याप्त स्वार्थ और सत्ता-संघर्ष का चित्रण मिलता है। आलोचकों के अनुसार यह आत्मकथा एक साहसी स्त्री के उस संघर्ष को सामने लाती है जो पुरुषप्रधान समाज में अपनी पहचान बनाने के लिए लगातार जोखिम उठाती है। रमणिका गुप्ता ने सामाजिक परंपराओं और स्त्री-विरोधी मान्यताओं को चुनौती देते हुए राजनीति और साहित्य दोनों क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभाई। वे कहती हैं - *"सामाजिक न्याय के लिए जरूरी है सामाजिक पहचान, सम्मान, प्रतिष्ठा और बराबरी ! यह समानता का सपना साकार करने के लिए नहीं बल्कि मनुष्य समझे जाने के लिए भी जरूरी है। वह भी केवल कुछ व्यक्तियों के लिए नहीं बल्कि पूरे समाज के लिए जरूरी है।"* 6 उन्होंने यह सिद्ध किया कि स्त्री केवल पारिवारिक भूमिकाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक परिवर्तन की दिशा भी निर्धारित कर सकती है। उनके लेखन में दलित अस्मिता, स्त्री-स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय की प्रखर चेतना दिखाई देती है। साथ ही उन्होंने यह भी रेखांकित किया कि दलित साहित्य समाज में आत्मसम्मान, अधिकार और समानता की भावना को मजबूत करने का महत्वपूर्ण माध्यम है। अजय नावरिया जी का कहना है कि *"यह आत्मकथा सच कहने की हिम्मत और सच कहने की हिमाकत के बीचो-बीच कहीं अदृश्य बारूदी सुरंग के पास खड़ी उनके ट्रेड यूनियन और राजनीतिक जीवन से जुड़े हादसों की दास्तां है।"* 7

अर्थ मानव के जीवन का मूल आधार है और उसी के आधार पर उसकी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति निर्धारित होती है। आधुनिक समय में औद्योगिक विकास, भौतिक सुख-सुविधाओं

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

के आकर्षण तथा बढ़ती महत्वाकांक्षाओं के कारण धन प्राप्ति को जीवन का प्रमुख लक्ष्य मान लिया गया है। किंतु रमणिका गुप्ता के अनुसार अर्थ जीवन के लिए आवश्यक तो है, पर वह अंतिम उद्देश्य नहीं बल्कि जीवन को संचालित करने का साधन मात्र है। उनके साहित्य में विशेष रूप से मजदूरों, दलितों और निम्नवर्गीय समुदायों की आर्थिक परिस्थितियों तथा उनसे जुड़े संघर्षों का यथार्थ चित्रण मिलता है। रमणिका गुप्ता ने अपने उपन्यासों, कहानियों और कविताओं में दलित समाज की आर्थिक विषमता और अभावग्रस्त जीवन को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। उनके उपन्यास 'सीता मौसी' में एक दलित स्त्री की आर्थिक विवशता का मार्मिक चित्रण मिलता है। इसमें सुमित्रा नामक स्त्री प्रसव के तुरंत बाद भी मजदूरी करने के लिए बाध्य होती है, क्योंकि परिवार के पालन-पोषण के लिए उसके पास कोई अन्य साधन नहीं है। इसी प्रकार कोयला खदानों में काम करने वाली स्त्रियों को मातृत्व अवकाश जैसी सुविधाएँ कागज़ों में तो उपलब्ध थीं, परंतु ठेकेदारों की मनमानी के कारण उन्हें वास्तविक रूप में नहीं मिल पाती थीं। परिणामस्वरूप दलित स्त्रियों को प्रसव के बाद भी कठोर श्रम करना पड़ता था, जिससे उनकी आर्थिक विवशता स्पष्ट होती है। लेखिका ने यह भी दिखाया है कि दलित वर्ग के लोग कठोर परिश्रम करने के बावजूद भी अपने श्रम का उचित मूल्य नहीं प्राप्त कर पाते। इसका परिणाम यह होता है कि उनकी आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय बनी रहती है। उनकी कविताओं में यह स्थिति कई प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से सामने आती है, जहाँ दलित श्रमिक स्वयं को ऐसे प्राणी के रूप में अनुभव करता है जो लगातार श्रम करता है, परंतु उसके श्रम का फल उसे नहीं मिलता। इस प्रकार आर्थिक शोषण के साथ-साथ सामाजिक अपमान भी उनके जीवन का हिस्सा बन जाता है।

रमणिका गुप्ता की रचनाएँ यह भी स्पष्ट करती हैं कि आर्थिक असमानता और जातिगत भेदभाव एक-दूसरे से गहरे रूप में जुड़े हुए हैं। उनकी कहानियों में कई प्रसंग ऐसे हैं जहाँ निम्न जाति से होने के कारण व्यक्ति को प्रेम, विवाह और सामाजिक सम्मान से वंचित कर दिया जाता है। ऐसे प्रसंग यह दिखाते हैं कि आज के आधुनिक समय में भी जातिगत मानसिकता पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है। लेखिका कहतीं हैं - *"दलितों की समस्या सामाजिक तो है ही, पर उनकी त्रासदी का कारण आर्थिक भी है।.....आज भी किसी दलित आई.ए.एस अफसर को गैर-दलित उसकी सत्ता के चलते सलाम भले करते हैं, पर उससे रोटी-बेटी का रिश्ता करना पसंद नहीं करते। ग्रामीण इलाकों में बदतर स्थिति है। बिहार, झारखंड में दलित दारोगा की चाय की प्याली सिपाही नहीं उठाता और पुलिस लाईन में दलितों का मेस अलग होता हैं, भले शहरों में कुछ हद तक यह भेदभाव टूटा है, पर रोटी-बेटी की हद तक तो बिल्कुल नहीं।"* 8

समाज में अभी भी दलितों को हीन दृष्टि से देखा जाता है और कई बार उन्हें हिंसा तथा अपमान का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार उनकी कहानियों में दलित स्त्री की आर्थिक असुरक्षा

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

का भी सजीव चित्रण मिलता है। अनेक बार नौकरी या आजीविका बचाने के लिए उसे अपमानजनक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि आर्थिक निर्भरता किस प्रकार दलित स्त्री को शोषण के दुष्चक्र में बाँध देती है। लेखिका इस यथार्थ को उजागर करते हुए यह संकेत देती हैं कि जब तक दलित समाज की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं होगी, तब तक सामाजिक समानता की स्थापना भी कठिन रहेगी। रमणिका गुप्ता का मानना है कि दलितों की समस्या केवल आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक संरचना से भी जुड़ी हुई है। आर्थिक रूप से सशक्त होने के बाद भी उन्हें कई बार सामाजिक स्वीकृति नहीं मिलती। इसलिए उनके साहित्य में आर्थिक संघर्ष के साथ-साथ विद्रोह, आत्मसम्मान और अधिकार चेतना के स्वर भी प्रमुख रूप से दिखाई देते हैं। रमणिका गुप्ता ने इस यथार्थ का चित्रण 'एक शब्द' कविता के माध्यम से किया है-

"सतत् श्रम का फलरहित परिणाम,
परिश्रम के फल से वंचित रखने की साजिश ।" 9

उनकी कविताएँ और कहानियाँ दलित समाज को अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने तथा अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा देती हैं। इस प्रकार उनका साहित्य आर्थिक विषमता और सामाजिक अन्याय के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिरोध के रूप में सामने आता है।

भारतीय संस्कृति में धर्म का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान माना गया है। धर्म वह स्थायी प्रवृत्ति है जो मनुष्य के जीवन को दिशा देता है और समाज में मान्य आचरण के रूप में स्थापित होता है। ईश्वर में आस्था, व्रत-उपवास, धार्मिक परंपराओं और रूढ़ियों का पालन धार्मिक जीवन का हिस्सा माना जाता है। रमणिका गुप्ता के साहित्य में धार्मिक परिवेश प्रमुख विषय नहीं है, फिर भी जहाँ इसका उल्लेख आता है वहाँ वह दलित समाज की आस्था, अंधविश्वास और सामाजिक वास्तविकताओं को उजागर करता है। 'सीता' उपन्यास में सीता अपने धर्म और रीति-रिवाजों को छोड़ने से इंकार करती है। वह अंधविश्वासों से जुड़ी होने के बावजूद धर्म को अपनी परिस्थितियों के अनुसार ढालने की कोशिश करती है, जैसे संतोषी माँ का व्रत पति की रक्षा के बजाय न्याय पाने के लिए रखना। इससे यह संकेत मिलता है कि दलित स्त्री धर्म का अनुसरण करते हुए भी अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए उसे अपने पक्ष में प्रयोग करती है।

रमणिका गुप्ता ने दलित समाज की उन रूढ़ियों को भी दिखाया है जिनमें जाति से बाहर विवाह करने पर स्त्री को बिरादरी से मृत घोषित कर दिया जाता है और भोज-भात जैसी रस्मों के बाद ही उसे फिर से स्वीकार किया जाता है। 'मौसी' उपन्यास तथा उनकी अन्य कहानियों में यह स्थिति स्पष्ट होती है कि सामाजिक मान्यता कई बार मनुष्य से अधिक परंपराओं और भोज जैसी रस्मों को दी

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

जाती है। लेखिका ने यह भी बताया है कि धर्म और परंपराएँ कई बार दलितों को हीनता और बंधनों में बाँधे रखती हैं। इसलिए वे दलित समाज को अंधविश्वास और रूढ़िगत संस्कारों से मुक्त होकर आत्मसम्मान और जागरूकता की ओर बढ़ने का संदेश देती हैं। 'मल-मूत्र ढोता भारत : सृजन के आइने में' रमणिका गुप्ता ने दलितों की धार्मिक जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनके दयनीय स्थिति का बहुत ही मार्मिक चित्रण किया है। आधुनिक दलित साहित्य भी अब केवल पीड़ा का चित्रण नहीं करता, बल्कि पुरानी मान्यताओं और जातिगत भेदभाव को चुनौती देते हुए परिवर्तन और सामाजिक न्याय की नई चेतना प्रस्तुत करता है।

समग्र रूप से देखा जाए तो रमणिका गुप्ता का साहित्य केवल दलित जीवन का यथार्थ चित्रण नहीं करता, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की एक सक्रिय चेतना को जन्म देता है। उनकी रचनाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि दलित प्रश्न केवल एक वर्ग की समस्या नहीं, बल्कि पूरे समाज की मानवीयता की परीक्षा है। उन्होंने साहित्य को सामाजिक संघर्ष और मानवीय समानता के पक्ष में हस्तक्षेप करने वाले माध्यम के रूप में उपयोग किया। डॉ एन. सिंह का कहना है - *"विचारधारा जब किसी व्यक्ति के जीवन में इस तरह शामिल हो जाए कि वह अपना सम्पूर्ण जीवन उसे ही समर्पित कर दे तो ऐसा व्यक्ति विचारधारा के लिए किसी भी हद तक खतरे उठाने के लिए तत्पर रहता है। रमणिका गुप्ता भी एक ऐसा ही व्यक्तित्व हैं।"* 10 उनके लेखन में दलित अस्मिता, स्त्री स्वाधीनता, श्रमिक अधिकार और सामाजिक न्याय की चेतना एक साथ उपस्थित दिखाई देती है। यही कारण है कि उनका साहित्य पीड़ा के वर्णन से आगे बढ़कर प्रतिरोध, आत्मसम्मान और परिवर्तन की प्रेरणा देता है। इस दृष्टि से रमणिका गुप्ता का साहित्य हिंदी दलित विमर्श को व्यापक सामाजिक सरोकारों से जोड़ते हुए एक ऐसी वैचारिक दिशा प्रदान करता है जो समानता, न्याय और मानवीय गरिमा पर आधारित समाज की स्थापना की ओर संकेत करती है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. गुप्ता, रमणिका, 'दलित हस्तक्षेप' सं. ओमप्रकाश वाल्मीकि, अक्षर शिल्पी प्रकाशन, दिल्ली, 2012, पृ.8
2. गुप्ता, रमणिका, 'दलित चेतना: साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार', समीक्षा प्रकाशन, दिल्ली, 2011 पृ.7
3. ओमप्रकाश वाल्मीकि, 'दलित साहित्य अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ', राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली, 2013, पृ. 7
4. गुप्ता, रमणिका, 'दलित हस्तक्षेप' सं. ओमप्रकाश वाल्मीकि, अक्षर शिल्पी प्रकाशन, दिल्ली, 2012, पृ.7
5. गुप्ता, रमणिका, 'हादसे', राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ. 129
6. गुप्ता, रमणिका, 'दलित हस्तक्षेप' शिल्पायन प्रकाशन, 2004, पृ.31
7. गुप्ता, रमणिका, 'हादसे', राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ.3-4
8. गुप्ता, रमणिका, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, 2007, पृ.31
9. गुप्ता, रमणिका, अब मूरख नहीं बनेंगे हम, नवलेखन प्रकाशन, बिहार, पृ.13-14
10. गुप्ता, रमणिका, 'दलित चेतना साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार', समीक्षा प्रकाशन, दिल्ली, 2011 पृ.15

अन्य सहायक ग्रंथ :

- वाल्मीकि, ओमप्रकाश, 'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2001
- नैमिशराय, मोहनदास, 'भारतीय दलित आंदोलन का इतिहास', राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2013
- सिंह, डॉ. एन., 'दलित साहित्य के प्रतिमान', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2012
- लिंबाले शरणकुमार, 'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', लोकचेतन प्रकशन, 2016
- बेचैन, श्यौराज सिंह, 'चिंतन की परंपरा और दलित साहित्य', नवलेखन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2001
- नैमिशराय, मोहनदास, 'हिंदी दलित साहित्य', साहित्य अकादमी, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2011
- सिंह, डॉ. एन., 'दलित चिंतन अनुभव और विचार', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2015